Research Ambition
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer-reviewed & Open Access) **Journal home page:** www.researchambition.com
ISSN: 2456-0146, Vol. 10, Issue-II, August 2025

भारतीय अध्यात्म एवं दर्शन प्रणाली में जन्म–मरण: एक दार्शनिक मीमांसा
(Birth-Death in the Indian Spiritual and Philosophical System: A Philosophical Analysis)

Dr. Shanker Suman Singh Bhadoria[a*]
[a]*Guest Faculty in Philosophy, PMCOE Govt. SMS PG College, Shivpuri, Krantivir Tatya Tope University, Guna, Madhya Pradesh, (India).*

KEYWORDS
जन्म–मरण, भारतीय दर्शन, कर्म, पुनर्जन्म, मोक्ष, विज्ञान, अध्यात्म, चिंतन, शरीर, आत्मज्ञान, वेदांत, मीमांसा, पुरूष (आत्मा), मीमांसा।

ABSTRACT
भारतीय अध्यात्म एवं दर्शन प्रणाली में जन्म–मरण को मात्र जैविक घटनाक्रम के रूप में नहीं अपितु कर्म, पुनर्जन्म, आत्मा तथा मोक्ष की विविध मीमांसीय अवधारणाओं से पोषित किया जाता है। जन्म–मरण का चक्र ही दुखों की जननी है, दुखों से पूर्ण मुक्ति के उद्देश्य से ही मोक्ष को भारतीय दर्शन में विशेष स्थान प्राप्त है, जो आत्मा के परम उद्देश्य को प्राथमिकता प्रदान करता है। जन्म–मरण के बंधन से कोई भी देहधारी आत्मा मुक्त नहीं है, यह प्रक्रिया जीवन की ऐसी अपरिहार्यता को दर्शाती है, जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा मानवीय बुद्धि से परे है। मानवीय सभ्यता के आरंभ से ही प्रबुद्ध मानव इस रहस्य को समझने हेतु सदैव उत्सुक रहा है कि जहां जन्म का अर्थ जीवन का प्रारंभ है तो क्या मृत्यु का अर्थ जीवन का अंत मात्र है या अवस्था परिवर्तन है? इस शोध के पत्र के माध्यम से हमने विविध आध्यात्मिक ग्रथों तथा भारतीय दर्शन के आस्तिक व नास्तिक सम्प्रदायों का तथा पश्चिमी दर्शन का अवलोकन प्रस्तुत किया है, जो जन्म–मरण की सार्थकता को सिद्ध करने में सहयोगी साबित होंगे। प्रस्तुत शोध–पत्र का मूल ध्येय जन्म–मरण प्रक्रिया की दार्शनिक मीमांसा करके यह जानने का प्रयास है कि जन्म–मरण केवल प्राकृतिक घटना मात्र है या आत्मा के उत्कर्ष तथा मोक्ष की दिशा में गतिशीलता का सूचक है। जहां गतिशीलता मानव को अर्थ (मतलब), दिशा और उद्देश्य प्रदान करने हेतु सामर्थ्यवान बनाती है, तो दूसरी ओर मृत्यु के भय को अन्तर्ज्ञान के प्रकाश से अभय प्रदान कराती है।

प्रस्तावना

मानव मस्तिष्क से परे कुछ ऐसे संदर्भ, जो मानव के बौद्धिक चिंतन का प्रमुख कारण रहे हैं उनमें जन्म–मरण का विशेष स्थान है। मानवीय मस्तिष्क की बौद्धिक, दार्शनिक तथा आध्यात्मिक गतिशीलता सदैव ही नवीन अन्वेषणों का केंद्र बिंदु रहा है। जिसमें जीवन एवं मरण क्या है, क्या जन्म–मरण प्रक्रिया अनिवार्य है? आदि रोचक तथ्य मानव की जिज्ञासु प्रवृत्ति को और भी ज्यादा अन्वेषणात्मक बनाते हैं। अध्यात्म में इस जिज्ञासा का शमन भावनात्मक दृष्टिकोण की जगह गहन दार्शनिक मीमांसा के माध्यम से प्रस्तुत किया है। भारतीय अध्यात्म एवं दार्शनिक परंपरा में जन्म–मृत्यु को मात्र जैविक घटना के रूप में नहीं अपितु आत्मा, कर्म एवं मोक्ष से सम्बद्ध एक व्यापक तात्विक प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया गया है। विज्ञान एवं चिकित्सा शास्त्र जीवन और मृत्यु को सिर्फ उत्पत्ति एवं विनाश से जोड़ते हैं। यह भौतिकवादी विचारधारा मानव की विविध जिज्ञासुता का शमन नहीं कर पाती है। इस कारण हमारे ऋषि, मुनि

Corresponding author
****E-mail:** rajesh982624@rediffmail.com (Dr. Shanker Suman Singh Bhadoria). https://orcid.org/0009-0003-9405-9424
DOI: https://doi.org/10.53724/ambition/v10n2.05
Received 10th June 2025; Accepted 10th July 2025
Available online 30th August 2025
2456-0146 /© 2025 The Journal. Publisher: Welfare Universe. This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

तथा मनीषियों ने अध्यात्म का सहारा लिया, जो उनको जन्म–मरण के विषय की गहन वैकल्पिक तथा समन्वित दृष्टिकोण प्रदान कराते हैं।

भारतीय अध्यात्म एवं दर्शन में विशेष कर वेद, उपनिषद, गीता, पुराण, सांख्य, योग, बौद्ध एवं जैन दर्शन जन्म–मरण को कर्मजन्य बंधन से ग्रसित मानते हैं, जिस कारण जन्म–मरण का चक्र गतिमान है।

वेद तथा उपनिषद आत्मा को नित्य एवं अविनाशी मानते हैं क्योंकि उनका मानना है कि जन्म–मरण तो शरीर की अवस्थायें हैं, न कि आत्मा की। गीता में श्री कृष्ण ने जन्म–मरण को वस्त्र परिवर्तन तुल्य परिभाषित किया है साथ ही मृत्यु को जीवन का अंत नहीं अपितु आत्म–विकास की प्रक्रिया का मूल चरण माना है। जन्म–मरण के संबंध में जटिलताऐं तब प्रकट होती हैं, जब मानव वैज्ञानिक एवं भौतिक दृष्टिकोण को सर्वोपरि स्वीकार कर लेता है और आध्यात्मिक मार्ग से विरक्त हो जाता है, जिससे मृत्यु भय, मानसिक अवसाद, जीवन की निरर्थकता का अनुभव तथा अस्तित्ववादी जटिलताओं को अनुभव करने लगता है।

1. **वैदिक दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा–** वैदिक दर्शन न केवल आध्यात्मिक परंपरा का मूल आधार है बल्कि जन्म–मरण तथा उसकी पारलौकिक यथार्थता की मीमांसा करता है। चारों वेद न केवल जन्म–मरण की भौतिक घटनाओं की व्याख्या करते हैं, बल्कि ऋत, कर्म, आत्म–तत्व, ब्रह्म तथा मोक्ष की व्यवस्थित दार्शनिक प्रक्रिया का विस्तृत विश्लेषण करते हैं। ऋग्वेद मृत्यु को पूर्ण विनाश न मानकर अवस्था परिवर्तन होना स्वीकारता है, जो आकस्मिक नही बल्कि नैतिक तथा कर्मगत प्रक्रिया है। यजुर्वेद में जन्म–मरण को यज्ञीय विधि के दृष्टिकोण से देखा जाता है, जो जीवन को यज्ञ तुल्य मान्यता प्रदान करता है और उसी के अनुरूप आचरण करना सिखाता है। अथर्ववेद में जन्मरण को आध्यात्मिक साधना एवं अर्थपूर्ण पद्धति से युक्त माना गया है। सामवेद में जन्म–मरण के संदर्भ में कोई भिन्न व्याख्या प्रतिपादित नहीं है, वह पुनर्जन्म, आत्मिक अमरता तथा कर्म के संबंध में ही विवेचन करता है।[1]

   वैदिक संहिताओं में आत्मा को पथिक तुल्य समता प्रदान की गई है, जो एक गंतव्य से दूसरे गंतव्य की ओर गतिमान होती है। इस भावना को वैदिक ऋषि–मुनियों ने मृत्यु को जीवन का विरोध नहीं अपितु जीवन की व्यापक अन्नत यात्रा का अनिवार्य चरण माना है।

   यहां स्पष्ट करना उचित होगा कि जन्म–मरण को किसी भी वैदिक ग्रंथ में अन्याय के रूप में परिभाषित नहीं किया है, बल्कि नैतिक व्यवस्था (ऋत) का परिणाम माना है। समग्र वैदिक तथा भारतीय दर्शन चिंतन में जन्म–मरण को भय एवं निराशा के रूप में नहीं बल्कि आत्मिक उन्नति का अवसर प्रदान करने वाला मार्ग स्वीकार किया है।[2]

पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरदः शतं।
श्रुणुयाम शरदः शतं, प्रब्रवाम शरदः शतम्।।
अदीनाः स्याम शरदः शतं, भूयश्च शरदः शतात्।।[3]

उक्त आर्शीवचन जीवन को सौ शरद ऋतुओं तक जीवित रहने, स्वस्थ ज्ञानेद्रियों (दृष्यता, श्रवणता), ओजपूर्ण वाणी, मानसिक और शारीरिक सामर्थ्यशीलता तथा गरिमामय जीवन की कामना के उद्देश्य से कहा गया है।

2. **उपनिषदिक चिंतन में जन्म–मरण की अवधारणा–** जन्म–मरण की जटिल समस्या का गहन दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विश्लेषण उपनिषदों एवं पुराणों में निहित है। जहां वैदिक साहित्य में जीवन–मृत्यु संबंधी विचारों की न्यूनता है तो दूसरी ओर उपनिषदों में इन्हें आत्मा, ब्रह्म, मोक्ष, पुनर्जन्म एवं कर्म सिद्धांतों से जोड़ा गया है। भारतीय आध्यात्मिक तथा

दार्शनिक ग्रंथों का मूल ध्येय अविद्या का समूल नाश करना है, जो जन्म–मरण की यथार्थता के मूल उद्देश्य को जीव के अंतःकरण में प्रकट ही नहीं होने देती है जिससे जीव भृमवश स्वयं को शरीरी मान लेता है और कर्म बंधनों से ग्रसित हो जाता है। जबकि विद्या (आत्म–ज्ञान) इस भ्रम को तोड़कर आत्मा और ब्रह्म की एकता का बोध कराती है जिससे जन्ममरण का अनवरत चक्र ही समाप्त हो जाता है। इसी प्रयोजन से ईशोपनिषद में वर्णित है कि ''जो विद्या और अविद्या दोनों का ज्ञान रखता है, वह मृत्यु से अमरत्व प्राप्त कर लेता है''।[4]

''स यो ह वै तत् परं ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति।
नास्याब्रह्मवित् कुले भवति।।''[5]

अर्थात जो जीव ब्रह्म का बोध कर लेता है, वह ब्रह्ममयी हो जाता है। उसके कुल में भी कोई अज्ञानी (अब्रह्मज्ञ) नही रहता है।

3. **गरुण पुराण में जन्म–मरण की अवधारणा–** गरुण पुराण हिंदू धर्म के 18 महापुराणों में अतिविशेष है क्योंकि यह पुराण मृत्यु, मृत्योत्तर अवस्था, कर्म–सिद्धांत, पुनर्जन्म एवं मोक्ष का विस्तृत वर्णन करता है साथ ही आत्मा की अमरता, कर्मानुसार गति, आत्मिक यात्रा आदि की भी विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत करता है, जो जन्म–मरण को न केवल शाश्वत चक्र के रूप में स्वीकारता है बल्कि मनोवैज्ञानिक ढंग से नैतिक स्वरूप के द्वारा सूक्ष्मता से तथ्यों को प्रदर्शित करता है।[6]

गरुण पुराण में जन्म का तात्पर्य आत्मा के सृजन से नही बल्कि कर्मानुसार नूतन शरीर धारण करने से है। आत्मा पूर्वजन्मों के कर्मानुसार एकत्रित संस्कारों से युक्त होकर नए शरीर में प्रवेश करती है जो गर्भावस्था काल में ही नव जीवन के प्रथम चरण से नाना प्रकार के दैहिक, दैविक तापों को भोगती है। मृत्यु के विषय में गरुण पुराण शरीर का अंत और आत्मा की अन्नत आत्मिक यात्रा का प्रारंभ मानते हैं, जीव अपने शुभ अथवा अशुभ कर्मानुसार विविध पड़ावों (वैतरणी नदी) को पार करता हुआ अपने न्यायाधिपति के यमलोक में प्रवेश करती है और अपने सृजित कर्मानुसार दंड या पारितोषिक प्राप्त करती है, न्याय का यएही प्रतिफल मृत्यु लोक में पुनः जन्म–मरण का कारण बनता है। आत्मा अपने कुछ कर्मफलों का भोग यमलोक में कर लेती है, तो शेष कर्मफलों के आधार पर नूतन शरीर धारण करती है। यह चक्र अनवरत चलता रहता है, जब तक मोक्ष की प्राप्ति न हो जाए। गरुण पुराण में मोक्ष को जन्म–मरण के चक्र से मुक्ति माना गया है, जहां आत्मा, परमात्मा में विलीन हो जाती है।[7]

गरुण पुराण के सिद्धांत कर्मफल पर आधारित होने से जीव की गति (शुभ या अशुभ किस प्रकार की होगी और कितने अवधि की होगी?) का निर्धारण होता है। नैतिक चेतना को जागृत करने के उद्देश्य से ही स्वर्ग तथा विविध नरकों का वर्णन इस पुराण में लिपीबद्ध है। गरुण पुराण में जन्म–मरण, दुख, न्याय, विधान तथा मोक्ष के संदर्भ में कुछ विशेष श्लोक –

''गर्भे दुःखसहस्राणि भुङ्क्ते जीवः सुदारुणम्''[8]
''प्राणोत्सर्गे तु पुरुषं यमदूता नयन्ति हि''[9]
''देहत्यागे ततः प्रेतो भवत्येव न संशयः''[10]
''यमः कर्मफलाध्यक्षः सर्वभूतहिते रतः''[11]
''शुभैः स्वर्गं व्रजेत् जीवो नरकं पापकर्मभिः''[12]
''भुक्त्वा कर्मफलान् जीवः पुनर्जन्म प्रपद्यते''[13]
''वासना कारणं पुंसां जन्मबंधस्य कीर्तितम्''[14]
''नारायणस्मृतिर्मोक्षहेतुः प्रोक्तः पुरातनैः''[15]
''न पुनर्जन्म तत्रास्ति यत्र विष्णुपदं गतिः''[16]

4. **श्रीमद्भगवत गीता में जन्म–मरण की अवधारणा –** जन्म–मरण के संबंध में श्रीमद्भगवत गीता में गहन, समन्वित तथा व्यवहारिक समाधान प्रस्तुत किया है। गीतानुसार– आत्मा जन्म तथा मृत्यु से मुक्त। यह

प्रासंगिक व्याख्या शरीर और आत्मा के भेद पर आधारित है, जो स्पष्ट करती है कि जन्म और मृत्यु शरीर के धर्म हैं, आत्मा के नहीं।[17]

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान् अन्यानि संयाति नवानि देही।।[18]

जिस प्रकार जीव अपने पुराने वस्त्रों को त्याग कर नए वस्त्र धारण करता है ठीक उसी तरह आत्मा भी अपनी देह को त्याग कर नए शरीर में प्रवेश करती है। कर्म सिद्धांत ही गीता का मूल विषय है, जो स्पष्ट करता है कि सकाम कर्म जन्म–मरण के चक्र को संचालित करता है तथा निष्काम कर्म इस चक्र से पूर्णतः मुक्ति प्रदान करता है।

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः।।[19]

कर्म के स्वरूप को जाने बगैर जन्म–मरण से मुक्त नहीं हुआ जा सकता है। गीता में पुनर्जन्म का न केवल दार्शनिक मंथन है बल्कि नैतिक अनुशासन भी है, जो मानव आचरण को नैतिक दिशा और दशा प्रदान करता है।

मोक्ष के विषय में गीता की व्याख्या दार्शनिक विवेचना की पराकाष्ठा है, जो जीव कर्म–योग, भक्ति–योग तथा ज्ञान–योग के माध्यम से आत्मज्ञान का बोध कर लेता है, वह मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः।।[20]

ईश्वर की प्राप्ति उपरांत ही जन्म–मरण से मुक्ति संभव है, यही मोक्ष की अवस्था है।

5. भारतीय दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा

''न जायते म्रियते वा कदाचित् नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।''[21]

तात्पर्य है कि न आत्मा का जन्म होता है और न मृत्यु! वह न पूर्व में नष्ट हुई और न भविष्य में नष्ट होगी बल्कि वह नित्य, शाश्वत, अजन्मा तथा सनातन है, शरीर के नष्ट हो जाने पर भी आत्मा का नाश नही होता है। जन्म–मरण तो आत्मा का शरीर से संबंध–विच्छेद मात्र है। जन्म–मरण की प्रक्रिया न केवल आध्यात्मिक है बल्कि नैतिक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक भी है।[22] भारतीय दर्शन जन्म–मरण को मात्र दार्शनिक समस्या के रूप में नहीं अपितु जीवन की सार्थकता को सिद्ध करने का साधन मानता है। विविध दार्शनिक मतों के उपरांत भी सभी दार्शनिक सम्प्रदायों का लक्ष्य दुखों से पूर्णतः निवृत्ति या आत्म–बोध करना है। यही धारणा भारतीय दर्शन की आधारशिला है। भारतीय दर्शन के आस्तिक तथा नास्तिक सम्प्रदायों में जन्म–मरण के विविध मतों की विवेचना निम्नानुसार की है–

5.1 चार्वाक दर्शन

अवैदिक चार्वाक (लोकायत) दर्शन अपने भौतिकवादी तथा अनुभववादी दृष्टिकोण के अनुरूप जन्म–मरण को सिर्फ प्राकृतिक घटना (भौतिक तत्वों के संयोजन एवं वियोजन) का परिणाम मानता है।

एक मात्र प्रत्यक्ष प्रणाली पर आश्रित होने से यह दर्शन स्वीकारता है कि जन्म न कोई आध्यात्मिक प्रक्रिया है और न मरण। यह तो सिर्फ चार भूतों पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु का विशेष संयोग एवं वियोग का परिणाम है (''तत्र पृथिव्यादीनि भूतानि चत्वारि तत्त्वानि)।''[23] चैतन्यविशिष्टः कायः पुरुषः अर्थात चेतनामय शरीर ही पुरुष (आत्मा) है।[24] चार्वाक दर्शन कर्मफल, मोक्ष और पुनर्जन्म को सिर्फ काल्पनिक तथा अप्रमाणिक मानता है।

5.2 बौद्ध दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा

बौद्ध दर्शन की अवैदिक विचारधारा होने उपरांत भी जन्म–मरण की समस्या पर तात्विक पद्धति से मीमांसा करते हैं। ये जन्म–मरण को प्रतीत्यसमुत्पाद सिद्धांत द्वारा समझाते हैं ''कोई भी वस्तु स्वतंत्र रूप से उत्पन्न नहीं है अपितु कारणों एवं परिस्थितियों का संयोग मात्र है।'' आत्मा का कोई स्थाई अस्तित्व स्वीकार न होने से आत्मा

के पुनर्जन्म को पंच स्कन्धों (रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान) का परिणाम माना गया है।[25] निर्वाण (मोक्ष) जन्म–मरण चक्र का अंत है, जो अविद्या तथा तृष्णा के संपूर्ण क्षय की अवस्था का द्योतक है। जन्म–मरण एक साधारण प्रक्रिया है, न कि आत्मा के आवागमन का कारक।

5.3 जैन दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा

जैन दर्शन भी अवैदिक संप्रदाय शैली में होने उपरांत भी जन्म–मरण का विवेचन बड़े ही सरल शब्दों में किया है। जैन दर्शन में मान्यता है कि जीव (आत्मा) नित्य, चेतन एवं स्वतंत्र तत्व के रूप में विद्यमान है फिर भी जीव अपने कर्म बंधनों के चक्र में स्वयं उलझ जाता है। कर्म ही बंधन का मूल कारण है, जो आत्मा के मूल आवरण पर पर्दा डाल देती है, जिससे जीव का जन्म–मरण उच्च या निम्न योनियों में होता रहता है। कैवल्य (मोक्ष) ही समस्त कर्म बंधनों से मुक्ति का एकमात्र मार्ग है, जो त्रिरत्न के माध्यम से ही प्राप्त होती है।[26]

5.4 न्याय तथा वैशेषिक दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा

तर्क प्रधान परंपरा का प्रतिनिधित्व करने वाले यह दर्शन जन्म–मरण को तार्किक एवं द्रव्यात्मक दृष्टि से समझाने का प्रयत्न करते हैं। न्याय दर्शन गौतम ऋषि कृत तथा वैशेषिक दर्शन कणाद ऋषि कृत ने जन्म–मरण की समस्या का वस्तुनिष्ठ एवं तार्किक ढंग से समाधान प्रस्तुत किया है, जो उनके दर्शन को यथार्थवादी एवं व्यावहारिक बनाता है। उनका मानना है कि आत्मा शरीर, इंद्रियों तथा मन से पूर्णतः भिन्न है, जो जन्म–मरण के चक्र से मुक्त है। जन्म–मरण तो शरीर का होता है आत्मा तो अपने अदृष्ट कर्मों के अनुसार नूतन शरीर धारण कर लेती है। जब आत्मा शरीर, मन तथा इंद्रियों से पूर्णतः मुक्त हो जाती है तब अपवर्ग (मोक्ष) की अवस्था का बोध होता है, जो न तो सुख की अवस्था है और न दुख की! यही पूर्ण शुद्ध आत्म स्वरूपता की स्थिति है।[27]

5.5 सांख्य दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा

कपिल ऋषि सृजित सांख्य दर्शन में जन्म–मरण को प्रकृति एवं पुरुष दो स्वतंत्र तथा अनादि तत्वों के संयोग का परिणाम माना है। जन्म–मरण का ज्ञान पुरुष को न होकर प्रकृति से निर्मित शरीर और मन को होता है, जो प्रकृति के तीन गुणों (सत, रज, तम) के संयोग का फल है। जब पुरुष अविवेक वश स्वयं को प्रकृति से तादात्म्य स्थापित कर लेता है, तब वह जन्म–मरण का अनुभव करने लगता है।

स्थूल शरीर एवं सूक्ष्म शरीर यह दोनों प्रकृति के विकार मात्र हैं। मृत्यु उपरांत स्थूल शरीर तो नष्ट हो जाता है किंतु सूक्ष्म शरीर तथा उसके एकत्रित संस्कार अगले जन्म में प्रवेश के लिए तैयार हो जाते हैं। प्रत्येक कर्म संस्कारों का सृजन करता है, जो सूक्ष्म शरीर में संग्रहित होते रहते हैं। यही पुनर्जन्म का मूल कारण है। कैवल्य ज्ञान से ही पुरुष एवं प्रकृति का पृथक्करण संभव है, जो मोक्ष की स्थित है तदोपरांत् पुरूष (आत्मा) जन्म–मरण के चक्र से मुक्त हो जाता है।[28]

5.6 योग दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा

महर्षि पतंजलि ने अपने योग सूत्र में चित्त की वृत्तियों को ही बंधन का मूल कारण माना है। क्योंकि इन्ही पंचवृत्तियों (प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा, स्मृति) के कारण ही आत्मा स्वयं को शरीर तथा मन से तादात्म्य स्थापित कर लेती है जिससे जन्म–मरण के चक्र में फंस जाती है और मृत्यु उपरांत चित्त में संचित संस्कार पुर्नजन्म का कारण बनते हैं। कर्म के माध्यम से संस्कार चित्त में संग्रहित होते रहते हैं, जो अगले जन्म का कारण बनते हैं।

जन्म–मरण के बंधन से मुक्ति योग एवं समाधि के द्वारा ही संभव है क्योंकि योग एवं समाधि से चित्त की सभी वृत्तियों का निरोध हो जाता है और पुरुष अपने यथार्थ

स्थिति का बोध कर लेता है। इस अवस्था में सभी कर्मफल नष्ट हो जाते हैं, जो जन्म–मरण के बंधन का कारण हैं यह स्थिति मुक्ति (कैवल्य) है।

''परिणामतापसंस्कारदुःखैर्गुणवृत्तिविरोधाच्च दुःखमेव सर्वं विवेकिनः।''

''तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्।''[29]

5.7 मीमांसा दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा

जैमिनीकृत मीमांसा दर्शन जन्म–मरण की व्याख्या कर्म सिद्धांत पर करते हैं। यह दर्शन आत्मा को नित्य, अविनाशी तथा चेतन युक्त मानता है, जो जन्म–मृत्यु से परे है किंतु शरीर के जन्म–मरण की अनवरत प्रक्रिया को स्वीकारते हैं। मीमांसा दर्शन अपूर्व सिद्धांत के आधार पर उल्लेख करता है कि प्रत्येक कर्म अपूर्व का सृजन करते हैं, जो अदृश्य रूप से संचित होते रहते हैं। यह भविष्य के फल रूप में पुर्नजन्म का कारण बन जाते हैं।

मीमांसा दर्शन मोक्ष को दुखों की संपूर्ण निवृत्ति मानता है किंतु ज्ञान की अपेक्षा कर्म को प्रधानता देता है। इसी कारण यह दर्शन शुभ कर्मों के आधार पर स्वर्ग तथा अशुभ कर्मों के आधार पर नरक की प्रासंगिक व्याख्या करता है, जो उसकी अनित्यता को स्वीकारता है।[30]

5.8 अद्वैत वेदांत में जन्म–मरण की अवधारणा

शंकराचार्य द्वारा विरचित अद्वैत वेदांत में जन्म–मरण को पारमार्थिक सत्य के रूप में नहीं बल्कि अविद्या से सृजित व्यवहारिक जन्य अनुभव माना गया है क्योंकि आत्मा न तो जन्म लेती है, न मरती है। जन्म–मरण तो मात्र शरीर और मन का स्तर सम्बन्ध एवं सम्बन्ध विच्छेद है। आत्मा तो स्वयं सच्चिदानंद स्वरुप है। शरीर (स्थूल देह) तथा सूक्ष्म शरीर (मन, बुद्धि, अहंकार) का मरण होता है। जन्म–मरण के चक्र का संचालन अविद्या तथा माया द्वारा होता है। जीव तो स्वयं को कर्ता–भोक्ता मानता है, जो कर्म फल से जुड़ा रहता है।

पुनर्जन्म अज्ञानता की अवस्था में व्यवहारिक सत्य सा प्रतीत होता है, जब अविद्या का नाश होता है तो आत्मा और ब्रह्म ऐक्य (अहं ब्रह्मास्मि) स्थिति में आ जातें हैं। ब्रह्मसूत्र में स्पष्ट है कि – ''न कभी जन्म हुआ था, न कभी मृत्यु होगी।''[31]

5.9 द्वैत वेदांत में जन्म–मरण की अवधारणा

यथार्थवादी परम्परा के परिचायक माध्वाचार्यकृत द्वैत वेदांत जन्म–मरण को यथार्थ रूप में स्वीकार करते हैं, जो नैतिक तथा दैवीय व्यवस्था के रूप में संचालित हैं। द्वैत दर्शन ईश्वर (विष्णु), जीव और जगत में भिन्नता दर्शाते हैं। जन्म–मरण की समस्या को ईश्वरीलय के रूप में नहीं अपितु जीव की पृथक सत्ता के रूप में स्वीकारते हैं। जन्म–मरण का मूल कारण कर्म है, जो अविद्या या माया न होकर यथार्थ घटना है। पूर्व कर्मानुसार जीव जन्म ग्रहण करता है। ईश्वर तो कर्मों का साक्षी, कर्मफल दाता तथा संसार का नियंता है।[32]

मोक्ष का तात्पर्य ईश्वर में लय होना नहीं है अपितु ईश्वर की सानिध्य प्राप्ति है। जिससे जन्म–मरण का चक्र ही समाप्त हो जाता है और शाश्वत आनंद की अनुभूति प्राप्त होती है।

5.10 विशिष्टाद्वैत वेदांत में जन्म–मरण की अवधारणा

रामानुज रचित विशिष्टाद्वैत वेदांत में जन्म–मरण को कर्माधीन रूप में स्वीकार किया है तथा आत्मा और ब्रह्म में अभेदात्मक भेद को स्वीकार कर मोक्ष को ईश्वरी अनुकम्पा के रूप में दर्शाया गया है।

जन्म–मरण तो कर्म एवं अविद्या का परिणाम है, जो मिथ्या नहीं है यह तो अनादि कर्मों के संस्कारों का प्रादुर्भाव है। अविद्या का अर्थ ब्रह्म से पूर्ण अज्ञानता नहीं, बल्कि स्वरूपात्मक विस्मृति है। क्योंकि जीव और जगत का आश्रय स्थल ब्रह्म है, जो ब्रह्म के नियमानुसार (ऋत) से संचालित होते हैं।[33]

विशिष्टाद्वैत दर्शन में मोक्ष का तात्पर्य जीव का ब्रह्म में विलय होना नहीं है, अपितु ब्रह्म की सायुज्य सेवा भक्ति में स्थित रहना है, जो भक्ति और प्रपत्ति से ही प्राप्त की

जा सकती है।

6. पाश्चात्य दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा

पाश्चात्य दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा का विकास भारतीय दर्शन से ऐतिहासिक, सांस्कृतिक तथा बौद्धिक पृष्ठभूमि स्तर की भिन्नता दिखाई देती है क्योंकि पाश्चात्य मत जन्म को प्रायः आत्मा, ईश्वर, नैतिकता तथा चेतना आदि के स्वरूप से जोड़ते हैं साथ ही मृत्यु को कभी आत्मा की मुक्ति तो कभी जीवन की पूर्णता अथवा अस्तित्वगत संकट के रूप में दर्शाते हैं जबकि भारतीय दर्शन आत्मा को कर्म एवं पुनर्जन्म से जोड़कर व्याख्या करता है।[34]

प्लेटो द्वारा रचित ''फीडो'' संवाद में मृत्यु को दार्शनिक के लिए भय नहीं अपितु साध्य का विषय माना गया है। प्लेटो कहते हैं कि मृत्यु तो आत्मा की मुक्ति है, जो शरीर से भिन्न तथा अमर है। क्योंकि आत्मा देह रूपी कारावास से स्वच्छंद होकर सत्य के ज्ञान लोक में प्रवेश करती है।[35]

इसके विपरीत अरस्तू ने ''आत्मा को शरीर का रुपात्मक तत्व माना है, जो बगैर देह के अस्तित्वहीन है।''

ईसाई दर्शन में जन्म–मरण की अवधारणा में सेंट ऑगस्टाइन तथा थॉमस एक्वीनाश ने जन्म को ईश्वर प्रदत्त माना है तथा मृत्यु को पाप का परिणाम।[36]

आधुनिक पश्चात दर्शन भौतिकतावाद तथा युक्तिवाद की ओर अग्रेसर है, जहां एक ओर डेकार्ट ने आत्मा और शरीर के द्वैतवाद को स्वीकार किया है, तो दूसरी ओर अस्तित्ववादी दार्शनिक मार्टिन हाइडेगर ने मनुष्य को मृत्युगामी प्राणी माना है, जो जीवन का वास्तविक अर्थ होना दर्शाता है क्योंकि मृत्यु की यथार्थता मनुष्य को प्रामाणिक जीवन निर्वाहन हेतु बाध्य करती है।

सार्त्र महोदय के दर्शन में मृत्यु का वर्णन जीवन की निरर्थकता को उजागर करने वाले शब्द के रूप में हुई है।

पाश्चात्य दर्शन में विविध मतभेद होने के कारण जन्म–मरण, पुनर्जन्म तथा मोक्ष की कोई व्यवस्थित एवं मूल्य परक व्याख्या का अभाव है। जिससे एक मतीय सर्वमान्य व्याख्या कर पाना असंभव प्रतीत होता है।

निष्कर्ष

जन्म–मरण की व्याख्या भारतीय अध्यात्म दर्शन में न केवल जैविक घटना की व्युत्पत्ति है बल्कि मानव अस्तित्व कर्म, चेतना, मोक्ष, पुनर्जन्म, ईश्वर तथा ऋत व्यवस्था से जुड़ी हुई गूढ़ अवधारणा को दर्शाती है फिर भी आस्तिक तथा नास्तिक संप्रदायों ने इस हेतु अपने–अपने तार्किक दृष्टिकोण प्रस्तुत किए हैं। यदि समग्र संप्रदायों की एकमत व्याख्या की जावे तो ज्ञात होता है कि जन्म–मरण मानवीय दुख एवं कर्म का परिणाम है, इन दुखों की संपूर्ण निवृत्ति ही मोक्ष है, जो जीव का परम लक्ष्य है। भले ही इस हेतु साधन या सिद्धांतों में कितनी भी भिन्नता क्यों न हो लेकिन सभी का उद्देश्य एक मत है, जिसे मुक्ति, मोक्ष, केवल्य, निर्माण तथा आत्मज्ञान आदि विविध नामों से जानते हैं। वर्तमान परिवेश में जन्म–मरण की यह दार्शनिक व्याख्या अति प्रासंगिकपूर्ण है क्योंकि ऐसे समय में जब बात भौतिकवादी मानसिकता, नास्तिक विचारधारा, मानसिक अवसाद, अस्तित्वगत संकट, मृत्यु–भय तथा अशांति जैसी विभीषिकाओं से मानव ग्रसित है। जन्म–मरण की दार्शनिक प्रासंगिकता उसके जीवन में व्याप्त विभीषिकाओं का समूल अंत करती है, जिससे जीवन मानवता, नैतिकता तथा दया एवं करुणा भाव से उत्प्रोत हो जाता है।

जन्म–मरण की जटिलता को समझने हेतु दो तरह के दृष्टिकोण प्रचलित हैं। एक आध्यात्मिक दृष्टिकोण तो दूसरा भौतिकवादी दृष्टिकोण। दोनों ही दृष्टिकोण जीवन एवं मृत्यु को समझने का प्रयास है किंतु उनके आधार, उद्देश्य तथा परिणाम में भिन्नता है।

जन्म–मरण के संदर्भ में विविध आध्यात्मिक तथा दार्शनिक मान्यताओं की तुलनात्मक तालिका

तालिका क्रमांक 01

विषय	वेद	उपनिषद	गरुण पुराण	भगवद् गीता
आत्मा का अस्तित्व एवं उसकी प्रकृति	(स्वीकार) आत्मा नित्य एवं शाश्वत	(स्वीकार) आत्मा नित्य, शाश्वत, अविनाशी तथा ब्रह्म स्वरूप	(स्वीकार) आत्मा शाश्वत, चेतन और अविनाशी सत्ता	(स्वीकार) आत्मा जन्म, मरण से परे, अविनाशी एवं परमात्मा का अंश
जन्म–मरण की मान्यता एवं कारण	(स्वीकार) कर्म, अविद्या (अज्ञान) और कामना	(स्वीकार) अविद्या, वासना और कर्म	(स्वीकार) कर्म, अविद्या और कामना	(स्वीकार) अविद्या, कर्म एवं त्रिगुणात्मक प्रकृति से आसक्ति
मोक्ष की मान्यता एवं साधन	(स्वीकार) ज्ञान, ध्यान, संयम और भक्ति	(स्वीकार) ज्ञान, ध्यान, संयम और भक्ति	(स्वीकार) कर्म, भक्ति और ज्ञान का संयोजन	(स्वीकार) कर्मयोग, ज्ञानयोग एवं भक्तियोग
मोक्ष का तात्पर्य	जन्म–मरण, कर्म बंधनों से मुक्ति एवं शाश्वत सुख	जन्म–मरण, कर्म बंधनों से मुक्ति एवं आत्मा का ब्रह्म तुल्य अनुभव	जन्म–मरण और कर्मबंधनों से मुक्ति एवं अति अनन्त आनंद की अवस्था	जन्म–मरण और कर्मबंधनों से मुक्ति एवं शाश्वत आनंद
पुनर्जन्म की मान्यता	(स्वीकार)	(स्वीकार)	(स्वीकार)	(स्वीकार)

तालिका क्रमांक 02

विषय	चार्वाक दर्शन	बौद्ध दर्शन	जैन दर्शन	न्याय दर्शन
आत्मा का अस्तित्व एवं उसकी प्रकृति	(अस्वीकार) केवल भौतिक शरीर एवं चेतन शरीर से उत्पन्न	(अस्वीकार) अनात्मवाद एवं पंच स्कंधों का संघ	(स्वीकार) आत्मा शाश्वत एवं वास्तविक द्रव्य	(स्वीकार) आत्मा द्रव्य, शरीर मन तथा इंद्रियों से भिन्न
जन्म–मरण की मान्यता एवं कारण	(अस्वीकार) न आत्मा, न परलोक, न पुनर्जन्म मात्र भौतिक/प्राकृतिक घटना	(स्वीकार) तृष्णा (वासना), अज्ञान, कर्म, अनात्मा एवं प्रतीत्यसमुत्पाद	(स्वीकार) आत्मा के कर्म बंधन (पुद्‌गल), आसक्ति और अज्ञान	(स्वीकार) अदृष्ट कर्म, संस्कार स्मृति, मोह एवं अविद्या
मोक्ष की मान्यता एवं साधन	(अस्वीकार) मोक्ष निषेध, भौतिक सुख ही परम लक्ष्य	(स्वीकार) अष्टांगिक मार्ग, मोह–त्याग एवं ध्यान	(स्वीकार) ज्ञान, कर्म, तप एवं त्रिरत्न	(स्वीकार) ध्यान, विवेक और आत्मज्ञान
मोक्ष का तात्पर्य	पारंपरिक मोक्ष अस्वीकार केवल भौतिक सुख ही वास्तविक	जन्म–मरण, दुःख, तृष्णा एवं मोह से पूर्ण मुक्ति	जन्म–मरण, कर्मबंधन से मुक्ति एवं निर्विकारी आत्मा का अनुभव	जीव के सर्वोच्च सुख की अवस्था
पुनर्जन्म की मान्यता	(अस्वीकार)	(स्वीकार)	(स्वीकार)	(स्वीकार)

तालिका क्रमांक 03

विषय	वैशेषिक दर्शन	सांख्य दर्शन	योग दर्शन	मीमांसा दर्शन
आत्मा का अस्तित्व एवं उसकी प्रकृति	(स्वीकार) आत्मा स्वतंत्र, नित्य एवं द्रव्य	(स्वीकार) पुरुष (आत्मा) निष्क्रिय, द्रष्टा एवं शुद्ध चेतना	(स्वीकार) आत्मा (पुरुष) नित्य, शुद्ध चेतन किन्तु निष्क्रिय	(स्वीकार) आत्मा स्वतंत्र द्रव्य, युक्त, नित्य एवं अविनाशी चेतना
जन्म–मरण की मान्यता एवं कारण	(स्वीकार) कर्म, कर्मफल, मोह, अज्ञान और भौतिक तत्वों का संयोग–वियोग	(स्वीकार) प्रकृति पुरुष के संयोग से उत्पन्न कर्म और दोष	(स्वीकार) अविद्या, कर्म, आसक्ति, मन, बुद्धि और शरीर के बंधन	(स्वीकार) कर्म, कर्मफल, आसक्ति और अविद्या
मोक्ष की मान्यता एवं साधन	(स्वीकार) ज्ञान, तप, नैतिक जीवन और ध्यान	(स्वीकार) ज्ञान, तप, और ध्यान	(स्वीकार) ज्ञान, तप, संयम और ध्यान	(स्वीकार) धर्मपालन, ज्ञान, तप और अनुष्ठान
मोक्ष का तात्पर्य	जन्म–मरण, कर्मबंधनों से मुक्ति, शुद्ध और स्थायी आत्मा का अनुभव	जन्म–मरण, कर्मबंधनों से मुक्ति, पुरुष के शुद्ध और स्वतंत्र चेतन रूप का अनुभव	जन्म–मरण और कर्मबंधनों से मुक्ति, कैवल्य (पूर्ण स्वतंत्र चेतना)	जन्म–मरण, कर्मबंधनों से मुक्ति एवं शाश्वत आनंद
पुनर्जन्म की मान्यता	(स्वीकार)	(स्वीकार)	(स्वीकार)	(स्वीकार)

तालिका क्रमांक 04

विषय	अद्वैत वेदांत	विशिष्टाद्वैत	द्वैत वेदान्त	पाश्चात्य दर्शन
आत्मा का अस्तित्व एवं उसकी प्रकृति	(स्वीकार) सच्चिदानन्द स्वरूप, एकमेव अद्वितीय, निराकार एवं निर्विकार	(स्वीकार) चेतन द्रव्य, अणु स्वरूप, कर्ता और भोक्ता	(स्वीकार) चेतन एवं परतंत्र, अणु स्वरूप, कर्ता और भोक्ता	मतभेद
जन्म–मरण की मान्यता एवं कारण	(व्यवहारिक स्तर पर स्वीकार) अविद्या, माया और कर्म जीव के बंधन रूप में	(स्वीकार) कर्म, कर्मफल, मोह एवं ईश्वरीय सत्ता का नियमन	(स्वीकार) कर्म और ईश्वरीय अनुग्रह	मतभेद
मोक्ष की मान्यता एवं साधन	(स्वीकार) अविद्या, माया और आत्म–निग्रह	(स्वीकार) भक्ति, ज्ञान, विवेक, धर्मपालन और साधना	(स्वीकार) भक्ति, ज्ञान, विवेक, धर्मपालन, साधना एवं ब्रह्म (विष्णु) सन्निधि में सेवा	मतभेद
मोक्ष का तात्पर्य	जन्म–मरण, अज्ञान से मुक्ति एवं आत्मा का ब्रह्म के साथ साक्षात्कार	जन्म–मरण, कर्मबंधन से मुक्ति एवं जीव का ईश्वर के साथ यथार्थ	जन्म–मरण, कर्मबंधनों से मुक्ति एवं ईश्वरीय साक्षात्कार	मतभेद

		अनुभव		
पुनर्जन्म की मान्यता	(व्यवहारिक स्तर पर स्वीकार, पारमार्थिक स्तर पर अस्वीकार)	(स्वीकार)	(स्वीकार)	मतभेद

उक्त प्रदर्शित तालिका क्रमांक 01–07 का निष्कर्ष है कि भारतीय आध्यात्मिक तथा दर्शन प्रणाली में जन्म–मरण की अवधारणा न केवल शाश्वत है बल्कि मोक्ष प्राप्ति के लिए एक प्रमुख साधन के रूप में भी स्वीकार है, जो जीव का परम लक्ष्य है। जन्म–मरण का चिंतन न केवल दार्शनिक विमर्श है बल्कि मोक्ष प्राप्ति के मार्ग की मार्गदर्शिका भी है।

यह अध्ययन दर्शाता है कि ''जन्म–मरण का चिंतन भारतीय अध्यात्म तथा दर्शन प्रणाली में कर्म, आध्यात्मिक उन्नति (अविद्या का नाश) तथा मोक्ष के चिंतन का केंद्रीय विषय है जबकि पाश्चात्य मत में जन्म–मरण के विविध असंगत स्वरूप देखने को मिलते हैं''। जिन पर एक मत व्याख्याय संभव नहीं है।

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।।

सन्दर्भ

[1] ऋग्वेद, (2016). ऋग्वेद संहिता (हिंदी भाष्य सहित), गोरखपुरः गीता प्रेस, पृ. 31–36 एवं 410–416।
यजुर्वेद, (2015). शुक्ल यजुर्वेद संहिता (हिंदी भाष्य सहित), गोरखपुरः गीता प्रेस, पृ. 496–502।
अथर्ववेद, (2013). अथर्ववेद संहिता (हिंदी भाष्य सहित), गोरखपुरः गीता प्रेस, पृ. 300–307।

[2] ऋग्वेद, (2016). ऋग्वेद संहिता (हिंदी भाष्य सहित), गोरखपुरः गीता प्रेस, पृ. 413–418।

[3] यजुर्वेद, (2015). शुक्ल यजुर्वेद संहिता (हिंदी भाष्य सहित), गोरखपुरः गीता प्रेस, 36.24; पृ. 562–563।

[4] वही, 40.11; पृ. 501–502।

[5] मुण्डकोपनिषद्, (2014). मुण्डकोपनिषद् (हिंदी भाष्य सहित), गोरखपुरः गीता प्रेस, 3.2.9; पृ. 121–122।

[6] गरुण पुराण, (2017). गरुण पुराण (हिंदी अनुवाद सहित), गोरखपुरः गीता प्रेस प्रेतकल्प, अध्याय 5–15; पृ. 211–228, 310–327।

[7] वही, अध्याय 4–7; पृ. 205–214, 248–262, 318–330।

[8] वही, अध्याय 14 पृ. 278

[9] वही, पृ. 219; प्रेतकल्प, अध्याय 5।

[10] वही, पृ. 221; प्रेतकल्प, अध्याय 6।

[11] वही, पृ. 233; प्रेतकल्प, अध्याय 8।

[12] वही, पृ. 245; प्रेतकल्प, अध्याय 11।

[13] वही, पृ. 262; प्रेतकल्प, अध्याय 15।

[14] वही, पृ. 326; उत्तरखण्ड, अध्याय 19।

[15] वही, पृ. 338; उत्तरखण्ड, अध्याय 21।

[16] वही, पृ. 342; उत्तरखण्ड, अध्याय 22।

[17] भगवद्गीता, (2016). श्रीमद्भगवद्गीता (हिंदी अनुवाद सहित), गोरखपुरः गीता प्रेस, पृ. 78–85; 2.13, 2.20, 2.22, 2.27।

[18] वही, पृ. 84; 2.22।

[19] वही, पृ. 152; 4.17।

[20] वही, पृ. 308; 8.15।

[21] वही, पृ. पृ. 82; 2.20।

[22] वही, पृ. 75–85, 119–123, 150–153; 2.13, 2.20, 3.9, 4.17, 6.5, 8. 6।

[23] माधवाचार्य, (2014). सर्वदर्शनसंग्रह (हिंदी अनुवाद सहित), वाराणसीः चौखम्बा संस्कृत संस्थान, पृ. 4–5।

[24] वही, पृ. 6–9।

[25] मिश्र, हृदयनारायण, (2009). भारतीय दर्शन, वाराणसीः शेखर प्रकाशन इलाहाबाद पृ. 161।

[26] राहुल, भिक्षु, (2001). बुद्ध का धम्म, नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, पृ. 50–55।

[27] गौतम, (2001). न्यायसूत्रम् (वात्स्यायन भाष्य सहित), वाराणसीः चौखम्बा संस्कृत संस्थान, पृ. 110–120।
कणाद, (2000). वैशेषिकसूत्रम् (प्रशस्तपाद भाष्य सहित), वाराणसीः चौखम्बा संस्कृत संस्थान, पृ. 145–151।

[28] ईश्वरकृष्ण, (2001). सांख्यकारिका (वाचस्पति मिश्र कृत तत्त्वकौमुदी टीका सहित), वाराणसीः चौखम्बा संस्कृत संस्थान, पृ. 57–98।

[29] पतञ्जलि, (2002). योगसूत्रम् (व्यासभाष्य एवं हिंदी व्याख्या सहित), वाराणसीः चौखम्बा संस्कृत संस्थान, पृ. 34, 112; 2.15, 1.3।

[30] दासगुप्त, एस. एन. (2000). भारतीय दर्शन का इतिहास (खंड 1). दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास, पृ. 402–411।

[31] शंकराचार्य, (2002). ब्रह्मसूत्र–शारीरक भाष्य (हिंदी व्याख्या सहित). वाराणसीः चौखम्बा संस्कृत संस्थान, पृ. 110 –121।

[32] शर्मा, बी. एन. के. (1994). माध्वाचार्य का दर्शन (हिंदी अनुवाद). दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास, पृ. 177–189।

[33] विवेकचूडामणि, (2001). विवेकचूडामणि (हिंदी व्याख्या सहित). वाराणसीः चौखम्बा संस्कृत संस्थान, पृ. 79–89।

[34] हाइडेगर, एम. (1962). अस्तित्व और समय (जे. मैक्वेरी और ई. रॉबिंसन, अनुवाद). न्यूयॉर्कः हार्पर एंड रो, पृ. 241–259।

[35] प्लेटो (1997). फेडो (जे. एम. कूपर, अनुवाद). इंडियानाः हैकेट पब्लिशिंग, पृ. 61–67।

[36] संट ऑगस्टाइन, (2002). कन्फेशन्स (हिंदी अनुवाद). नई दिल्लीः ओरिएंट ब्लैकस्वान, पृ. 45–50, थॉमस एक्वीनाश, (2001). सुम्मा थेओलॉजिका (हिंदी अनुवाद). दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास, पृ. 111–117।

****